मयंक श्रीवास्तव

जब जब भी....

जब जब मैंने कोशिश की है
राह बदलने की
जाने क्यों मेरा कद छोटा
होने लगता है

जब–जब मैंने वर्तमान से
हटने की ठानी
प्रासंगिकता की आंखों में
आ जाता पानी
जब भी मुस्कानों की
सेज सजाने निकला हूं
सुबक सुबक कर
भीतर कोई रोने लगता है

ज्यों कोई अनुबंध तोड़कर
जुर्म किया भारी
या फिर मैं अपने से ही
कर बैठा गद्दारी
जब भी नया रंग लाने को
आगे पांव रखा
अपना चिंतन
अर्जित यश को खोने लगता है

अनुभव की तारीखें आकर
बारम्बार कहें
डगर पुरानी पूरी चलकर
नूतन राह गहें
खुद से दूर हुआ हूं
तब तब मेरा अपनापन
संतापों के अनगिन
शूल चुभोने लगता है।

उलझनें

क्या करूंगा
इस उजाले का
जो मुझे बीमार करता है

रोशनी डूबी हुई सड़कें
जब मुझे गोदी बिठाती हैं
गांव से मेरे कई खुशियां
रूठ कर लौट जाती हैं
कर्ज की सीमा
बढ़ने का
दर्द चेहरे पर उतरता है

रोशनी के कैद खाने में
नित्य दुनिया हो रही छोटी
राजपथ की जगमगाहट से
मिल रही संवदना खोटी
दूरियां बढ़ना
सचाई से
अब बहुत ज्यादा अखरता है

स्वप्न जीने और मरने की
यह उजाला ही दिशा देता
खुशमिजाजी के सभी मोहरे
दांत में अपने दबा लेता
सामने बैठे हुए
भय से
चुप्पियां साधे मुखरता है।

सम्पर्क–
सी–242, सर्वधर्म कालोनी
कोलार रोड
भोपाल (म.प्र.)–462042